**ओ३म्**

**‘होली और उसके पूर्व महाभारतकालीन स्वरुप पर विचार’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

भारत और भारत से इतर देशों में जहां भारतीय मूल के लोग रहते हैं, प्रत्येक वर्ष फाल्गुन माह की पूर्णिमा के दिन रंगों का पर्व होली हर्षोल्लास पूर्वक मनाया जाता है। होली के अगले दिन लोग नाना रंगों को एक दूसरे के चेहरे पर लगाते हैं, मिठाई व पकवानों का वितरण आदि करते हैं और कुछ हुड़दंग भी करते हैं। क्या होली का प्राचीन स्वरुप भी वर्तमान जैसा था? इससे कुछ भिन्न था वा यह वर्तमान स्वरूप पूर्व की विकृति वा रूपान्तर है?

विचार करने पर ज्ञात होता है कि भारत की धर्म व संस्कृति 1.96 अरब पुरानी है। महाभारत काल, आज से लगभग 5000 वर्ष पूर्व, तक वैदिक संस्कृति अपने मूल स्वरूप में देश देशान्तर में विद्यमान रही। इसका प्रमाण है कि भारत में वेदों के साक्षात ज्ञानी, ऋषि, मुनि व योगी महाभारत काल तक बहुतायत में रहे हैं। दूसरा प्रमाण यह है कि न भारत में और न हि विश्व के किसी अन्य देश में आज से पांच हजार वर्ष पूर्व की किसी अन्य धर्म, संस्कृति का कोई प्रमाण मिलता है। महाभारत ग्रन्थ में ऐसे अनेक प्रमाण है कि प्राचीन काल में भारत के लोग विश्व वा यूरोप के प्रायः सभी देशों में आते जाते थे। मनुस्मृति ग्रन्थ सृष्टि के आदि में रचा गया जिसमें वर्णन है कि यह आर्यावर्त्त देश ही संसार का अग्रजन्मा देश है। संसार के सभी देशों के लोग यहां विद्यार्जन करने आते थे और अपने योग्य चरित्र आदि की शिक्षा लेते थे। यहां से वेदों आदि व सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त कर अपने देश में उसका प्रचार व उपयोग करते कराते थे।

वेद मनुष्य के जीवन को सुखमय बनाने के लिए ईश्वरोपासना सहित पंचमहायज्ञों का विधान करते हैं। इन पंच महायज्ञों में मनुष्यों के अनेक व अधिकांश कर्तव्य आ जाते हैं। वैदिक धर्म व संस्कृति **“वसुधैव कुटुम्बकम”** की भावना को मानने वाली संस्कृति है। यहां सभी लोग सृष्टि के आदि काल से **‘सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।’** की प्रार्थना करते आ रहे हैं। अतः आज जैसी होली महाभारतकाल तक भारत व विश्व में कहीं होने की कोई सम्भावना नहीं है। अनुमान है कि वर्तमान जैसी होली का प्रचलन मध्यकाल में पुराणों की रचना से कुछ समय पूर्व व रचना होने से प्रचलित हुआ। प्राचीन काल में तो प्रत्येक माह पूर्णमास पर बड़े-बड़े यज्ञों का प्रचलन होने का अनुमान होता है। वृहत यज्ञों के उस प्राचीन स्वरूप का अनुसरण ही मध्यकाल से प्रचलित होकर वर्तमान काल तक फाल्गुन की पूर्णिमा के दिन रात्रि को होली जलाकर किया जा रहा है। यज्ञ से वायुमण्डल शुद्ध, पवित्र, सुगन्धित व स्वास्थ्यवर्धक होता है। यज्ञ से बादल बनते हैं, समय पर आवश्यकतानुसार वर्षा होती है, अतिवृष्टि वा अनावृष्टि नहीं होती, शुद्ध, पवित्र व स्वास्थ्यवर्धक अन्न उत्पन्न होता है व यज्ञ में देवपूजा, संगतिकरण व दान करने से ऐसे अनेक लाभों सहित हमारे अन्दर पाप की प्रवृत्ति का भी शमन होता है। इसके साथ अदृष्ट धर्म लाभ भी होता है जिससे हमारा वर्तमान, भविष्य, परजन्म सुधरता है व अच्छे कर्मों के सग्रंह से मोक्ष की प्राप्ति की ओर जीवात्मा प्रवृत्त होता है।

फाल्गुन की पूर्णिमा को मनाये जाने का एक कारण यह भी है कि भारत में सृष्टि के आदि काल से प्रचलित चैत्र, बैसाख, ज्येष्ठ, आषाण आदि बारह हिन्दी महीने जो चैत्र से आरम्भ होकर फाल्गुन की पूर्णिमा को समाप्त होते हैं, उनमें फाल्गुन पूर्णिमा वर्ष का अन्तिम दिन होता है। आज हिन्दी के बारह महीनों का अन्तिम महिना फाल्गुन का अन्तिम दिन है। एक प्रकार से वर्ष का अन्त हो रहा है। कल से चैत्र का महीना आरम्भ होगा। यह वर्ष का पहला महीना होता है। अतः वर्ष के अन्त पर वृहत्त यज्ञ का आयोजन कर उसे विदाई दी जाती थी और हो सकता है कि नये वर्ष के प्रथम महीने चैत्र के प्रथम दिन को नये वर्ष के रूप में हर्षोल्लास पूर्वक मनाया जाता रहा हो। इसका इतना अभिप्राय हो सकता है कि यदि किसी का किसी के प्रति कोई द्वेष भाव होता रहा होगा तो इस दिन उसे छोड़ने का संकल्प लिया जाता होगा व ऐसे लोग परस्पर मिलकर आपस में प्रेम व मैत्री पूर्ण संबंध पुनः स्थापित करने की प्रतिज्ञा करते होंगे। उसी का कुछ विकृत रूप आज एक दूसरे पर रंग लगाकर, गले मिलकर, स्वादिष्ट पदार्थों का परस्पर वितरण करके व रंग डालकर मनाने की परम्परा मध्यकाल व उसके बाद से चल पड़ी है। ऐसा देखा जाता है कि इस दिन लोग हुड़दंग करते हैं, कुछ नशा करके गलत उदाहरण भी प्रस्तुत करते हैं तथा कहीं कहीं परस्पर लड़ाई झगड़े आदि भी हो जाते हैं। वर्तमान का समय शिक्षा व आधुनिकता का युग है अतः सभी को सभ्यता का अच्छा उदाहरण इस दिन प्रस्तुत करना चाहिये।

यह भी विचारणीय है कि होली से पूर्व शीत के महीने होते हैं। शीत ऋतु वृद्ध लोगों के लिए तो कष्टकर होती ही है परन्तु साथ हि युवा व बच्चों सहित निर्धन लोगों के लिए भी अति कष्टदायक होती है। अतः ऋतु परिवर्तन से शीत की निवृत्ति व सबके लिए सुखद ऋतु वसन्त के होने पर सबका हर्षित व प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है। देश के कृषक लोग भी इस अवसर पर प्रसन्नता व सुख का अनुभव करते हैं क्योंकि उनकी गेहूं व अन्य फसलें पक कर तैयार होती हैं। सारा वातावरण नये नये फूलों की सुगन्ध से सुवासित होता है। सभी वृक्ष अपने पुराने पत्ते-पत्तियों का त्याग कर नये हरे पत्ते धारण करते हैं जिस प्रकार मनुष्य पुराने वस्त्रों को छोड़कर नये वस्त्र धारण करता है। इससे सारा वातावरण व उसका परिदृश्य मनमोहक व लुभावना बन जाता है। ऐसे में सामान्य मनुष्य का मन कुछ आमोद प्रमोद की बातों में लगना स्वाभाविक होता है जिसकी अभिव्यक्ति होली के चैत्र कृष्ण प्रथमा के पर्व से होती है। इतना ही निवेदन है कि मनुष्य को जोश के साथ होश भी रखना चाहिये। कहीं किसी के द्वारा इस पर्व पर कोई अमर्यादित बात व कार्य नहीं होना चाहिये। वैदिक साहित्य का अध्ययन कर हमें लगता है कि सभी परिवारों में पूर्णिमा व अगले दिन प्रथमा को अनिवार्य रूप से अग्निहोत्र व हवन का प्रचलन होना चाहिये जिसमें किसान अपनी नई फसल वा गेहूं की बालियों की आहुतियां भी दे सकते हैं जिससे यह पर्व मनाना सार्थक होता है। इस प्रकार यज्ञ पूर्वक होली को मनाना होली का मुख्य प्रतीक बनना चाहिये। इससे लाभ ही लाभ होगा। समाज, पर्यावरण व देश सभी उन्नत होंगे और ईश्वर प्रदत्त प्राचीन वैदिक धर्म व संस्कृति उन्नति को प्राप्त होगी।

होली के दिन प्रायः सभी घरों में स्वादिष्ट भोजन व नाना प्रकार के पकवान बनते हैं और लोग परस्पर अपने पड़ेसियों व मित्रों में इसका वितरण व सेवन आदि करते हैं। यह अच्छी प्रथा है। लेख को विराम देने से पूर्व इतना और निवेदन है कि इस दिन सभी समर्थ व सम्पन्न लोगों को समाज क निर्धन व साधनहीन लोगों तक अपनी ओर से उनके उपयोग की कुछ वस्तुयें वितरित करने का प्रयास करना चाहिये और उनको आगे बढ़ाने का कुछ सहयोग किया जा सके तो इसका विचार करना चाहिए। आज होली के दिन हमने कुछ क्षण जो चिन्तन किया है, उसे आपको सादर भेंट करते हैं और सभी बन्धुओं व मित्रों को हमारी होली के पर्व की बहुत बहुत शुभकामनायें हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**